हमारे गुरू-मित्र दत्ता सावले

कमला भसीन

दत्ता और मेरी मुलाकात 1980 में हुई, यानी आज से 33 साल पहले। दत्ता उम्र में मुझ से कुछ बड़े थे मगर समझ और अनुभव में मुझ से बहुत बड़े थे। दिखने में और हाव-भाव से कोमल थे, मरदाने नहीं। वे दोस्ती बहुत जल्दी कर लेते थे। मजाकिया थे और खूब खुलकर हंसते थे। एक दो बार मिलने के बाद ही लगा कि हम अच्छे मित्र हैं।

दत्ता गाना बहुत अच्छा गाते थे और इस से भी ज्यादा अच्छी बात यह थी कि वे बिना ज्यादा नखरा किये गा देते थे। पुराने गीत और शास्त्रीय संगीत वे ज्यादा पसंद करते थे। दत्ता ने महाराष्ट्र में जन समूहों के साथ बहुत काम किया था। मजदूरों और किसानों के साथ कैसे काम किया जाये, कैसे उनके जीवन और कैसे समस्याओं को समझा जाये, कैसे उन से सीखा जाये और कैसे उन्हें सिखाया जाये, हमने दत्ता से सीखा। बातों-बातों में दत्ता समझ लेते थे और समझा देते थे कि गरीबों का शोषण और उत्पीड़न कैसे होता है, शोषण व उत्पीड़न के ढांचे कैसे काम करते हैं, ये ढांचे कैसे आदिवासियों, दलितों, महिलाओं आदि को आगे बढ़ने ही नहीं देते।

मानव अधिकारों के रक्षक

उस समय जब बहुत कम लोग मानव अधिकारों की बात करते थे, दत्ता का पूरा नजरिया व काम करने का तरीका मानव अधिकारों पर आधारित था। उनका पूरा जीवन आदिवासियों, महिलाओं और दलितों के मानव अधिकारों की रक्षा में गुजरा। उनका विश्लेषण बहुत पैना था। वे सहभागियों से जानकारी लेते और फिर उसी जानकारी के अंशों को तरतीब से सजा कर समाज के दर्शन करवा देते। उनकी इस तरकीब का एक उदाहरण देखिये। आदिवासियों की एक बैठक में दत्ता ने पूछा कि जब आदिवासी बनिये की दुकान से कुछ खरीदने जाते हैं तो उस सामान की कीमत कौन तय करता है?

सबने कहा - वो दुकानदार बनिया तय करता है। यानि बेचने वाला तय करता है ?

सब ने कहा हां, बेचने वाला तय करता है।

फिर दत्ता ने पूछा कि जब आदिवासी अपनी पैदा की हुई या बनाई हुई कोई चीज बनिये को बेचने जाते हैं तब कौन कीमत तय करता है? जवाब मिला - तब भी बनिया ही कीमत तय करता है। यानि हर बार बनिया कीमत तय करता है और आदिवासी बनिये की मनमानी के शिकार होते हैं। इस तरह पूरा आर्थिक ढांचा समझ में आने लगता है। तभी किसी समस्या के उपाय समझ में आते हैं, यही सिखाते थे दत्ता।

इन आसान मगर कारगर तरीकों से सिखाते थे दत्ता। मेरी नजर में दत्ता एक बहुत ही सफल प्रौढ़ शिक्षक थे। शिक्षा का मूल मंत्र उनके लिये था ''सा शिक्षा या विमुक्तये'' यानि शिक्षा वह है जो हमें मुक्त करे। बंधनों, अन्याय, शोषण से मुक्त और असत्य से सत्य की ओर ले जाये। मेरा मानना है कि अगर दत्ता चिंतन और प्रशिक्षण के साथ-साथ लेखन भी करते और लेखन किसी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा में करते, तो उनका नाम और काम पाओलो फ्रेरे से कम नहीं होता। दत्ता के विचार व धरती से जुड़ा उनका काम बहुत ऊंचे स्तर का था, मगर उन्हें व उनके विचारों

को जो ख्याति, मान व फैलाव मिलना चाहिये था वो नहीं मिला।

दत्ता के साथ तीन कार्यशालायें व दो पुस्तकें

27 बरस तक मैं संयुक्त राष्ट्र संघ के कृषि व खाद्य संगठन (FAO) के साथ काम करती थी। मेरा काम दक्षिण एशिया, की स्वयं सेवी संस्थाओं व जन आंदोलनों के साथ प्रशिक्षण करने का व संजाल (networks) बनाने का था। मैं हर साल कई कार्यशालायें आयोजित करती थी ताकि हम दूसरे के साथ बैठकर सामाजिक और आर्थिक समस्याओं का विश्लेषण कर सकें व उनके समाधान ढूंढ़ सकें। ऐसी कई कार्यशालाओं में मैंने दत्ता को बुलाया और वे आये। मैं यहां तीन कार्यशालाओं के बारे में बताऊंगी, जिनमें मैं कई दिनों तक दत्ता के साथ थी और हम सुबह से शाम तक बातचीत और विमर्श करते थे, अपने अनुभव बांटते थे और कार्यशालायें चलाते-चलाते बहुत कुछ सीखते थे। मैंने प्रशिक्षण के बारे में इन कार्यशालाओं से बहुत कुछ सीखा।

झाबुआ, मध्यप्रदेश में आदिवासी युवाओं के साथ कार्यशाला

1980 के मध्य में झाबुआ में कार्यरत एक स्वयं सेवी संस्था के लिये मैंने एक दस दिन की कार्यशाला का आयोजन किया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य था आदिवासी युवावर्ग को विकास की प्रक्रिया समझने में मदद करना व भविष्य में अपने क्षेत्र में विकास कर्मी के रूप में काम करने के लिये तैयार करना। इस कार्यशाला में 55 आदिवासी युवतियां व युवक आये। ये सब रोजगार की तलाश में थे। यह कार्यशाला दस दिन की थी। इस कार्यशाला को मैं एक प्रयोग सा बनाना चाहती थी जिसमें प्रशिक्षक भी सीखें, एक दूसरे के नजदीक आयें ताकि भविष्य में भी वे मिलकर काम कर सकें। प्रशिक्षक के रूप में हम 12 लोगों की टीम थी। हम सब अलग-अलग संस्थाओं व इलाकों से थे व हमारे अनुभव और दक्षतायें भी भिन्न थीं। टीम में सब से अनुभवी दत्ता थे। आभा भैय्या, शीबा छाछी, जोगी और मैं दिल्ली से थे। जोगी और शीबा कलाकार हैं जिनके हुनर से हम एक साक्षरता की पुस्तक व इस कार्यशाला की रिपोर्ट डिजाइन करवाना चाहते थे। डॉ. सत्यमाला हमारे साथ थीं जो स्वास्थ्य के प्रश्नों पर हमें समझाती थीं। शरद कुलकर्णी आदिवासी जीवन पर विशेषज्ञ थे। सिपाही सिंह और फादर गौन्जालविस, बेतिया, बिहार से बुलाये गये थे और वे अनौपचारिक शिक्षा में माहिर थे। ममता जेटली, रमेशन नन्दवाना और भैवर सिंह राजस्थान से बुलाये गये थे और ये तीनों प्रौढ़ शिक्षा में दक्ष थे।

वे दस दिन हम सबके लिये भी उतने ही शिक्षाप्रद व लाभदायक थे जितने आदिवासी युवाओं के लिये। हम सब ने मिल कर एक बहुत ही अच्छी कार्यशाला की, साक्षरता की एक पुस्तक तैयार की
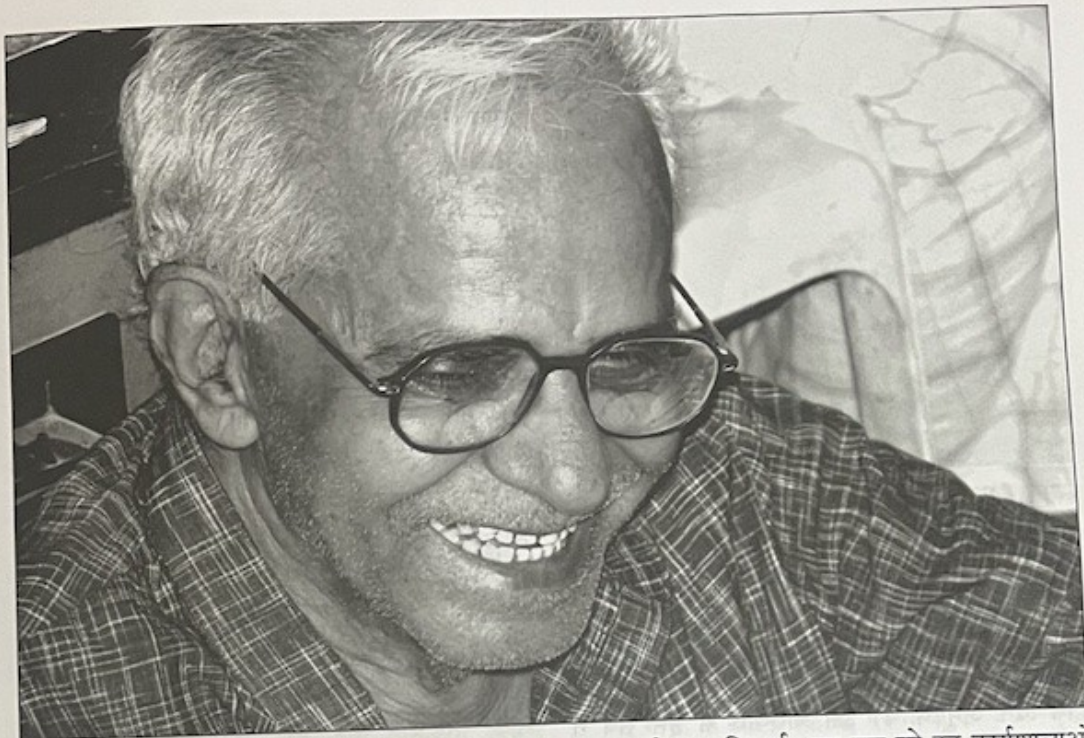
व एक रिपोर्ट बनाकर हिन्दी व इंगलिश में छापी और बांटी।

इन दस दिनों में हम दत्ता के बहुत घनिष्ट मित्र बन गये और इसके बाद दत्ता के साथ मिलना व मिलकर काम करना जारी रहा।

उत्तर प्रदेश के आदिवासी इलाके में कार्यशाला

प्रेम भाई और डॉक्टर रागिनी बहन उत्तर प्रदेश में एक बड़ी संस्था चलाते थे। वहां पर मैंने विकास व नुक्कड़ नाटक पर एक कार्यशाला आयोजित की। नाटक सिखाने के लिये त्रिपुरारी शर्मा को बुलाया जो आज नामी नाटक निर्देशक हैं। दत्ता और मैंने विकास व महिला मुद्दों को संभाला। हम एक-दूसरे से सीखते रहे और युवाओं को सिखाते रहे। चूंकि इस कार्यशाला में नाटक और संगीत पर जोर था, दत्ता ने भी अपनी कलाकारी खूब दिखाई। हम सब को इन कार्यशालाओं में इतना आनंद आता था कि सुबह से रात तक काम करने के बावजूद बिल्कुल थकान नहीं होती थी। हम सब में काम करने का एक जुनून था।

क्या हम सही रास्ते पर हैं ? सहभागी मूल्यांकन पर मानसिक मंथन

जनवरी 1983 में फिर से मैंने एक बैठक की यह समझने के लिये कि स्वयं सेवी संस्थाओं के काम का मूल्यांकन कैसे किया जाये। हम किस आधार पर कह सकते हैं कि हमारे कामों से आम लोगों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन आये हैं? यह सवाल बहुत सारे विकास कार्यकर्त्ताओं के मन में था और इस विषय पर गहरी बातचीत की जरूरत थी। यह तीन दिन की लंबी बातचीत सिकंदराबाद में की गई और इस में हम केवल सात लोग थे। सातों विकास,
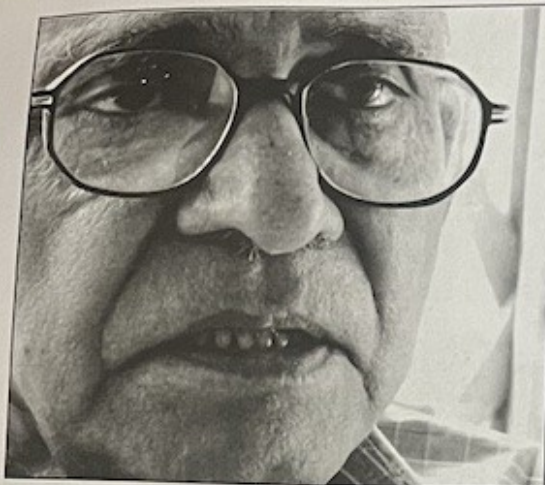
न्याय, मानव अधिकारों, स्त्री समानता विषयों पर काफी काम व विचार कर चुके थे। आंध्र प्रदेश की दो बड़ी संस्थाओं के संचालक एम. कुरिअन व एम. वी. शास्त्री, विकास भाई, अरूना रॉय, दत्ता सावले, आभा भैय्या और मैं शामिल थे इसमें। मेरे लिये ये तीन दिन अमूल्य थे। इस बातचीत से हम सब ने अपने काम के बारे में बहुत गहराई में जाकर सोचा। इन चर्चाओं को औरों के साथ बांटना जरूरी लगा क्योंकि इस प्रकार की चर्चा शायद पहले नहीं हुई थी या हमने उस के बारे में नहीं सुना था। मैंने इस मंथन पर आधारित एक रिपोर्ट लिखी जिसका नाम था Are we on the right track? इस रिपोर्ट को भी हमने बहुत लोगों तक पहुंचाया।

दत्ता को बहन की उपाधि दी गई

इन तीन व ऐसी कई और बैठकों व कार्यशाला के माध्यम से हम सब एक दूसरे के बहुत नजदीक आये और फिर उम्र भर के साथी। सहयोगी बन गये। दत्ता की विचारशीलता, संवेदनशीलता, हंसी-मजाक से हम बहुत प्रभावित हुये। दत्ता के साथ रह कर कभी कोई दूरी महसूस नहीं हुई। कभी ऐसा नहीं लगा कि वे पुरुष है, उनके साथ हर बात कैसे करें। दत्ता, उन बिरले पुरुषों में से थे जिन्हें हम ने अपने जैसा नारीवादी माना। दत्ता हम नारीवादी महिलाओं के साथ बहुत काम करने लगे। कई बार ढेरों महिलाओं में वे एक अकेले पुरुष होते। हम अक्सर मजाक में उन्हें दत्ता बहन कहते थे और वे इस उपाधि से बहुत खुश होते थे। उन्हें लगता था कि उन्हें बहन कहा जाना उनके लिये एक बहुत बड़ी उपलब्धि है और यह सही भी था। बहुत ही कम पुरुषों को यह उपाधि मिल सकती है या मिली है। इसी कारण बहुत सी नारीवादी संस्थाओं के प्रशिक्षणों में दत्ता को बुलाया जाता था। हमने जागोरी में हमारे 15 बरस के काम के मूल्यांकन के लिये भी दत्ता को ही चुना। आभा व दूसरे जागोरी के साथियों को यकीन था कि दत्ता की पैनी दृष्टि, तेज धुरी सी विशलेषण शक्ति से जागोरी बहुत कुछ सीखेगी और अपने काम को और संवार पायेगी।

दत्ता को हम सब की प्यार भरी श्रद्धांजलि

जो भी आया है उसे जाना है, पर वे लोग जो लोगों के दिलों में बस जाते हैं वे अमर हो जाते हैं, मरते नहीं। एक बहुत बड़ी जमात के लिये दत्ता अमर हैं। दत्ता के विचार उनके सपने हम बहुत सारे लोगों में जीवित हैं और हमारे बाद ये विचार और सपने उन में जीवित रहेंगे जिन्होंने हम से सीखा है।

आज दुनिया को दत्ता जैसे पुरुषों की जरूरत है, ऐसे पुरुष जो अर्धनारीश्वर है, जो समानता में विश्वास रखते हैं, जो अपने अंदर स्त्री व पुरुष दोनों को जिंदा रखते हैं, दोनों को पनपाते हैं।

दत्ता! तुम्हें प्यार भरा नारीवादी सलाम!! ⊙

संपर्क

द्वारा - संगत

बी-114, शिवालिक, मालवीय नगर

नई दिल्ली - 110017

फोन - *011-26691637*